झारखण्ड के हिन्दी उपन्यासों का सामान्य परिचय

डॉ. प्रज्ञा गुप्ता

सहायक प्रध्यापक, स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग, राँची विमेंस कॉलेज, राँची

सार संक्षेप

झारखण्ड के हिन्दी साहित्य का एक वृहत् संसार है। राधाकृष्ण से लेकर रणेन्द्र तक हिन्दी कथ साहित्य अत्यन्त समृद्ध है। यहाँ के कथाकारों मे गति, काल, और अर्थ की एक नई धारणा है अपने समय के यथार्थ, अपने समाज एवं संस्कृति को प्रस्तुत करने में ये रचनाएं सफल रही है 'रूपान्तर' से गूंगी रूलाई का कोरस तक समाज में देख सकते हैं, महसूस कर सकते हैं। इ रचनाकारों ने अपने समय के यथार्थ को कलमबद्ध करने का सकारात्मक प्रयास किया है। अप समय का द्वंद्व, लोकतांत्रिक देश की त्रासदी, उपभोक्ता, विस्थापन, राजनीतिक षड़यंत्र, तानाशाह जीवनकी उलझन, टूटते मानवीय रिश्ते, बिखराव और एक साधारण व्यक्ति की लाचारी सबकु यहाँ पर निबद्ध है। खासकर यहाँ के उपन्यासों में अपने समय का यथार्थ पूरी बेबाकी के सा अभिव्यक्त है।

विशिष्ट शब्द – उपभोक्तावाद, समकालीन–यथार्थ, वैश्विकरण, विस्थापन, महिषासुर।

उपन्यास लेखन की बात करें तो झारखण्ड के पास हिंदी उपन्यासों का एक वृहत संसार है। झारखण्ड में हिंदी उपन्यासों का सृजन काल कहानियों के पूर्व से ही माना जाता है। 1900 से 1910 ई. के बीच 1906 ई. में झारखण्ड के प्रथम उपन्यास 'राजपूती शान' का प्रकाशन हुआ जिसके लेखक रामचीज सिंह बल्लभ थे। इसके बाद क्रमशः 'ललिता' (1909 ई.) एवं उमाशंकर (1910 ई.) उपन्यासों का प्रकाशन हुआ। 1910 ई. से 1947 ई. तक के काल को झारखण्ड के उपन्यास साहित्य का विकास काल माना जा सकता है। इस दौर में रामदीन पाण्डेय की सामाजिक समस्याओं पर आधारित उपन्यास विधार्थी (1927 ई.), चलती पिटारी (1932 ई.) और वासना (1941 ई.) में प्रकाशित हुए। 1938 ई. में हवलदारी राम 'हलधर' का उपन्यास 'कंगाल की बेटी' का प्रकाशन हुआ और यह काफी लोकप्रिय हुआ। इसके पश्चात् सत्यनारायण शर्मा का उपन्यास गद्यकाव्यात्मक था एवं पत्र शैली में लिखा गया है। सत्यनारायण शर्मा का दूसरा उपन्यास 'टूटती हुई जंजीरे' (1945 ई.) में प्रकाशित हुआ। इसके पश्चात् डॉ. द्वारका प्रसाद और राधाकृष्ण के उपन्यास सामने आये।

डॉ. द्वारका प्रसाद ने कुल 21 उपन्यास लिखे। लगभग सभी उपन्यासों की विषयवस्तु मनोवैज्ञानिक थी। मनोवैज्ञानिक

होने के बावजूद डॉ. द्वारका प्रसाद का 'घेरे के बाहर' उपन्यास काफी चर्चित रहा एवं विवादास्पद भी। इनके अन्य मुख्य उपन्यास हैं स्वयंसेवक (1935 ई.), भटका साथी (1936 ई.), सर्द छाया (1946 ई.), घेरे के बाहर (1948 ई.), गुनाह बेलज्जत (1953 ई.), सुनील–एक असफल आदमी (1953 ई.), पहिए (1963 ई.), मम्मी बिगडेगी (1966 ई.), रंजना (1970 ई.), संगीता के मामा (1972 ई.), रति (1976 ई.), बेड़ियाँ (1977 ई.), संबंध (1978 ई.), अंकुश (1980 ई.), हथौड़े और चोट, जरूरत, किसकी प्रिया, मुक्ति, सर्द छाया आदि। डॉ. द्वारका प्रसाद झारखण्ड के पहले नियमित उपन्यासकार कहे जा सकते हैं। उन्होंने लगातार लिखा एवं विपुल मात्रा में लिखा। ''सन् 1948 में प्रकाशित उनके उपन्यास 'घेरे के बाहर' के बाद उनका सबसे चर्चित उपन्यास सन् 1936 ई. में आया 'पहिए'। लेकिन 'पहिए' का सम्यक् मूल्यांकन आज तक नहीं हो पाया जबकि वह अपने प्रभाव और प्रस्तुति के लिहाज से हिंदी के श्रेष्ठ उपन्यासों में एक है।''[1] घेरे के बाहर और 'पहिए' उपन्यास अन्य उपन्यासों की अपेक्षा कलेश्वर में बड़े हैं।

डॉ. द्वारका प्रसाद एवं राधाकृष्ण ने झारखण्ड में हिन्दी उपन्यासों के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका निभायी। 1951 ई. से 1936 ई. के बीच राधाकृष्ण के कुल पाँच उपन्यास प्रकाशित हुए – फुटपाथ (1951 ई.), सपने बिकाऊ हैं (1963 ई.), रूपान्तर (1952 ई.), बोगस (1953 ई.), सनसनाते सपने (1954 ई.)। इन उपन्यासों में 'रूपान्तर' काफी चर्चित रहा। राधाकृष्ण के उपन्यासों ने झारखण्ड में उपन्यास लेखन को लोकप्रियता एवं विशिष्ट ऊँचाई दी।

1950 ई. से 2000 ई. तक पचास वर्षों के अतंराल में झारखण्ड का उपन्यास साहित्य अत्यंत समृद्ध हुआ। इस दौर में कुछ लेखक तो उपन्यासकार के रूप में काफी प्रसिद्ध हुए जिनमें गुरूवचन सिंह, श्रवण कुमार गोस्वामी (जंगल तंत्रम्), ऋता शुक्ला (अग्निपर्व), सतीशचन्द्र (कालीमाटी), जयनन्दन (एहि नगरिया में केहि विधि रहना) और रमा सिंह उल्लेखनीय हैं। इस दौर में योगेन्द्र नाथ सिन्हा, गोपालदास मुंजाल, कमल जोशी, ज्योतिप्रकाश, शंभुनाथ मुकुल, बचन पाठक, सलिल, बलराम श्रीवास्तव, गंगा प्रसाद कौशल, शंभुनाथ प्रवासी, आनंद शंकर माधवन, श्यामसुन्दर घोष, कान्हजी तोमर, रमेश कु. वाजपेयी, वसंत कुमार, पूर्णिमा केडिया, अनिता रश्मि आदि ने उपन्यास लेखन को समृद्ध किया।

1950 ई. से 2000 ई. तक जो उपन्यास प्रकाशित हुए वे इस प्रकार है –

1. योगेन्द्र सिन्हा का 'वनलक्ष्मी' (1956 ई.) एवं 'वन के मन में' (1962 ई.)
2. गेपालदास मुंजाल का 'पूनम एक याद' (1955 ई.)
3. कमल जोशी का 'बहता तिनका' (1954 ई.)
4. ज्योति प्रकाश का 'सीधा रास्ता' (1955 ई.)
5. शंभुनाथ मुकुल का 'तलहटी के अंधेरे में' (1964 ई.)

6. बच्चन पाठक सलिल का 'स्नेह के आँसू' (1964 ई.)
7. बलराम श्रीवास्तव का 'एक दिन' (1966 ई.)
8. गंगा प्रसाद कौशल का 'सुकेशिनी' (1969 ई.)
9. शंभुनाथ प्रवासी का 'बतियाँ गुल हैं' (1964 ई.)
10. आनंद शंकर माधवन का 'एणाक्षी' (1989 ई.)
11. श्यामसुन्दर घोष का 'एक उलूक कथा' (1971 ई.) और 'एक अपराजिता' (1977 ई.)
12. कान्हजी तोमर का 'तमाम जंगल' (1979 ई.)
13. शशिकर का 'पल कमजोर है' (1990 ई.)
14. रमेश कुमार वाजपेयी की 'रिक्त आस्था' (1988 ई.)
15. बसन्त कुमार के 'लहरों के तीर' (1985 ई.)
16. पूर्णिमा केडिया का 'कच्चे सूत का बंधन' (1994 ई.)
17. श्रवण कुमार गोस्वामी का 'जंगल तंत्रम्' (1979 ई.), गोस्वामी जी का ही उपन्यास 'सेतु' (1981 ई.), 'भारत बनाम इण्डिया' (1983 ई.), 'दर्पण झुठ ना बोले' (1983 ई.), 'राहुकेतु' (1984 ई.), 'मेरे मरने के बाद (1985 ई.), 'चक्रव्यूह' (1988 ई.), 'एक टुकड़ा सच' (1992 ई.), 'आदमखोर (1992 ई.), 'केन्द्र और परिधि' (1996 ई, 'हस्तक्षेप' (2002 ई.)।
18. ऋता शुक्ला का 'अग्निपर्व' (1990 ई.), 'समाधान' (1991 ई.), 'कनिष्ठा उँगली का पाप' (1993 ई.), 'कितने जनम वैदेही' (1995 ई.), 'निष्कृति' एवं बाँधो न नाव इस ठांव' आदि दो उपन्यासिकाएं भी प्रकाशित हुई।
19. सतीशचन्द्र का 'कालामाटी' (1990 ई.), 'वनपाथर' (1992 ई.), 'बीतेदिन (1998 ई), 'अपना देश' (2002 ई.)।
20. सी. भास्कर राव का उपन्यास 'दिशा' (1989 ई.), 'शोध' (1994 ई.), 'संघर्ष' (1955 ई.), और 'दावानल' (1997 ई.)।
21. जयनन्दन के दो उपन्यास 'श्रम एवं जयते' (1992 ई.), और 'एहि नगरिया में केहि विधि रहना' (1994 ई.)।
22. रमा सिंह 'गुलाब छड़ी' (1996 ई.), 'तुम लिखोगी सत्यभामा' (1998 ई.), 'लौट आओ हैरी' (2002 ई.), 'कुतो पंथाः' (2002 ई.)।
23. श्यामबिहारी श्यामल का धपेल (1999 ई.), 'अग्निपुरूष' (2001 ई.)।
24. म्नमोहन पाठक का उपन्यास 'गगन घटा घहरानी' (1991 ई.)।
25. विनोद कुमार का 'समर शेष है' (1992 ई.)।

यहाँ तक प्रसिद्धि की बात है तो राधाकृष्ण के पश्चात् डॉ. श्रवण कुमार गोस्वामी ने अपने उपन्यास 'जंगल तंत्रम्' से पाठकों को प्रभावित किया और इस कृति पर इन्हें प्रथम राधाकृष्ण पुरस्कार प्राप्त हुआ। इन्होंने कुल 11 उपन्यास लिखे

जिसमें राजनीति और शिक्षा के क्षेत्रों की विसंगतियों को विषयवस्तु बनाया गया है एवं राज्य, देश, घर, परिवार की समस्याओं को चित्रित किया गया है। ऋता शुक्ला के उपन्यास 'अग्नि पर्व' (1990 ई.) ने भी पाठकों का ध्यान अपनी ओर आकृष्ट किया। उपन्यास लेखन में पत्रकार सतीशचन्द्र, सी. भास्करराव (दिशा), जयनन्दन, श्याम बिहारी श्यामल (धपेल, 1999), मनमोहन पाठक (गगन घटा बहरानी, 1991 ई.) और विनोद कुमार (समरशेष है) आदि भी काफी चर्चित रहे।

2002 ई. के बाद 21वीं सदी के आरंभ में वासुदेव सिंह का 'सुबह के इंतजार में' (2002 ई.), अवधेश शर्मा का व्यंग्य उपन्यास – 'मिस्टर अनफिट (2002 ई.), रतन वर्मा का रूक्मिणी (2002 ई.), कमल का 'आखर चौरासी (2003 ई.), तथा देवेश तांती का 'कालपुरूष' (2003 ई.) प्रकाशित हुए। इसके पश्चात् 2007 ई. में महुआ माजी की बंगाल विभाजन पर आधारित उपन्यास 'मैं बोरिशाईल्ला' अच्छी खासी चर्चित रही। महुआ माजी के इस उपन्यास ने बांग्लादेश विभाजन को आधार बनाकर राष्ट्र की बहस को बहुत ही गंभीरता से उठाया। जमींन से जुड़ी कथा भाषा एवं स्थानीय प्रकृति तथा घटनाओं के जीवन्त चित्रण की विलक्षण शैली के कारण यह उपन्यास काफी रोचक एवं पठनीय है। इस उपन्यास की अपेक्षा 2012 ई. में प्रकाशित उनकी दूसरी औपन्यासिक कृति मराड. गोड़ा नीलकंठ हुआ' को उतनी प्रसिद्धि नहीं मिल पायी। लेकिन यह उपन्यास महत्वपूर्ण उपन्यास है। इस उपन्यास में विकिरण प्रदूषण और विस्थापन से जूझते आदिवासियों की गाथा वर्णित है।

झारखण्ड के उपन्यासों में सबसे ज्यादा प्रसिद्धि रणेन्द्र के उपन्यास 'ग्लोबल गाँव का देवता' (2009 ई.), एवं 'गायब होता देश' (2014 ई.) को मिली। इन उपन्यासों में झारखण्ड का जनजीवन, उसकी समस्याएँ एवं समाप्त हो रहे मानव मूल्यों के प्रभावशाली चित्रण को देखा जा सकता है। 'ग्लोबल गाँव का देवता' उपन्यास आदिवासियों–वनवासियों के जीवन का संतप्त सारांश है।

इस उपन्यास में असुर समुदाय की गाथा पूरी प्रामाणिकता व संवेदनशीलता के साथ लिखी गई हैं। आग और धातु की खोज करने वाली, धातु पिघलाकर उसे आकार देने वाली कारीगर असुर जाति को सभ्यता, संस्कृति, मिथक और मनुष्यता सबने मिलकर जिस तरह से नष्ट किया है, उसका जीवन्त चित्रण हृदय को द्रवित कर देता है। कुल मिलाकर यह उपन्यास असुर समुदाय के अनवरत जीवन संघर्ष का दस्तावेज है। रणेन्द्र की 2014 ई. में प्रकाशित 'गायब होता देश' उपन्यास झारखण्डी पृष्ठभूमि पर मुण्डा जनजाति को केंद्र में रखकर लिखा गया एक साहसिक प्रयास है। एक गैर आदिवासी लेखक के लिए मुण्डा जनजाति के जन्म से मृत्यु तक के सारे मिथक, अनुष्ठान, विशेषताएँ, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिदृश्य एवं उनके जीवन–दर्शन को ऐतिहासिक एवं वैज्ञानिक तथ्य के आधार पर सविस्तार

प्रस्तुत करना आसान नहीं था लेकिन उपन्यासकार रणेन्द्र ने इन चीजों को बखूबी वर्णित किया है। हमारी सभ्यता, संस्कृति, भाषा, कला, पारंपरिक नृत्य, गीत, व्यंजन, गाँव, हाट–बाजार, पेड़–पौधे, पशु–पक्षी हमसे दूर होते जा रहे हैं। इन सभी चीजों को इस उपन्यास में मार्मिकता से उठाया गया है। समय, समाज, संस्कृति की दृष्टि से रणेन्द्र के दोनों उपन्यास अद्‌भुत हैं एवं पठनीय हैं।

इसके अलावे राकेश सिंह की औपन्यासिक कृति 'पठार पर कोहरा' (2003 ई), खासी चर्चित रही। 'जहाँ खिले हैं रक्त–पलाश' (2003 ई.), भी एक महत्वपूर्ण उपन्यास है। एक तरह से इसे समस्यामूलक उपन्यास कहा जा सकता है जो पलामू की धरती पर आधारित है। राकेश सिंह के अन्य उपन्यास 'साधो यह मुर्दो का गांव'(2007 ई.), 'हुल पहाड़िया', 'महाअरण्य में गिद्ध', 'ऑपरेशन महिषासुर' (2019 ई.), 'मिशन हॉलोकास्ट' (2020 ई.), 'रहिए आगे जंगल है' (2002 ई.) आदि भी काफी चर्चित एवं प्रसिद्ध हुआ।

पठार पर कोहरा – राकेश कुमार सिंह का यह उपन्यास 2003 ई. में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुआ था। इस उपन्यास में झारखण्ड मे मुण्डा आदिवासियों के शोषण को चित्रित किया गया है। ''पठार पर कोहरा'' उपन्यास पलामू क्षेत्र में रहने वाले आदिवासियों के जीवन को आधार बनाकर लिखा गया है। इस उपन्यास में दिखाया गया है कि आदिवासी समाज को शिक्षित करने के लिए सरकार योजना बनाती है। 'स्पीड' जैसी संस्था करोड़ो रूपये मुहैया कराती है ताकि आदिवासियों को शिक्षित किया जा सके। लेकिन अधिकांश लोगों को इस संस्था के बारे में जानकारी ही नहीं है। इसी बात का लाभ उठाते हुए वर्चस्ववादी लोग इन योजनाओं को हजम करते जा रहे हैं। आपरेशन ब्लैकबोर्ड के अंतर्गत राज्यों को केन्द्र सरकार की तरफ से करोड़ो रूपयों की राशि मिलती है। आदिवासी क्षेत्रों के विधालयों में फर्नीचर की खरीदी के लिए प्रति विधालय पचास हजार रूपयों की सहायता दी जाती है ताकि आदिवासी क्षेत्रों में शिखा बढ़े। लेकिन से सारी योजनाएँ केवल कागजों तक ही सीमित होकर रहा जाती हैं। जब कोई व्यक्ति यह जानकारी लेकर शिक्षा अधिकारियों के पास जाता है तो वहाँ पर भी कोई नहीं सुनता। इस भ्रष्टाचार में ऊपर से नीचे तक सबकी सह भागिता है।

जहाँ खिले हैं रक्तपलाश – राकेश कुमार सिंह का यह उपन्यास भी 2003 ई. में प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में राकेश कुमार सिंह 'जंगल दस्ता', 'फार्मर्स फ्रंट' और शांति सेना की प्रतिद्वन्द्विता और प्रतिस्पर्द्धा को नंदूघटवार और सत्यवती पाठक उर्फ सत्तो गुरूजी की कथा के संदर्भ में पूरे विस्तार से वर्णित करते हैं। इस उपन्यास की कथाभूमि पलामू का वन–प्रांतर है। कथाकार ने दिखाया है कि यहाँ के लोगों ने सामंती अवशेषों के खिलाफ हमेशा विद्रोह, आंदोलन किया लेकिन नेतृत्वकर्त्ताओं के खलन के कारण उनका

आंदोलन मुकाम तक नहीं पहुँच पाया। मजदूरी का अभिशाप झेलने वाले दलित आदिवासियों की कथा को उपन्यासकार ने बखूबी प्रस्तुत किया है। पलामू क्षेत्र में शोषण–अत्याचार के वे तमाम विद्रूप मौजूद रहे हैं जिनसे इंसानियत कलंकित होती रही है। इस उपन्यास में कथाकार ने इंसानियत के तार–तार होने उसके रक्तरंजित होने की कथा को अभिव्यंजित किया है। यह मूल रूप से एक समस्यामूलक उपन्यास है। पलामू की धरती पर चल रहे खूनी संघर्षों के बीच लोक राग के स्पंदनों की मौजूदगी की कथा को उपन्यासकार 'आरंभ', 'आरोह', 'अवरोह' और 'उपसंहार' तक विस्तृत रूप से वर्णित करते हैं। नंदू घटवार और सत्तो गुरूजी की करूण कथा इस उपन्यास में जिस तरह से वर्णित है वह अत्यंत रोचक एवं पठनीय है।

ऑपरेशन महिषासुर – राकेश कुमार सिंह का यह उपन्यास 2019 ई. में भारतीय ज्ञानपीठ से प्रकाशित हुआ। इस उपन्यास में पलामू और रांची के आस–पास के क्षेत्र के माध्यम से कथाकार ने आदिम जनजाति एवं आदिवासियों की महान संघर्ष गाथा को प्रस्तुत किया है। आदिवासी जीवन संघर्ष के विविध पहलुओं को समेटे यह उपन्यास रोचक ढंग से पाठकों के समक्ष प्रस्तुत है। इस उपन्यास का केंद्रीय पात्र पेशे से झारखण्ड बंधु नामक स्वयंसेवी संस्था का एक विधि सलाहकार है। साथ ही वह झारखण्ड बंधु प्रतिरोध संगठन झाबरा का संस्थापक भी है। ''महेश असुर उर्फ महिषासुर एक इस्पात कंपनी में आदिवासी मजदूरों के हक एवं अधिकार अर्थात् न्यूनतम मानवीय सुविधओं को दिलाने हेतु संघर्ष में शामिल होता है। और एक साथ सफल नेतृत्वकर्ता के रूप में अपना सब कुछ न्योछावर कर देता है। इस आन्दोलन का नेतृत्वकर्ता महिषासुर ही था। यह आंदोलन कोई सामान्य आंदोलन नहीं था। बल्कि एक चुनौती थी उन तंत्रो के लिए जो अपने प्रभत्व से इस संगठन की ताकत को दबाना चाहती थी''[2] उपन्यासकार राकेश कुमार सिंह ने महिषासुर के बारे में लिखा है – ''उस आंदोलन का नेतृत्व ही तो कर रहा था। उसने वहां के मजदूरों को ऐसा गोलबंद कर रखा था कि बस हाहाकार मच गया था। कड़े पानी वाला आदमी था जनाब यह महेश असुर। उस अकेले ने मोरिस टाउन की जीम–जमाई व्यवस्था को खुली चुनौती दी थी।''[3] बस इन्हीं सभी कारणों से महिषासुर मुठभेड़ में मार दिया जाता है। महेश का अंत यानि आंदोलन का अंत। उसकी मौत से व्यवस्था को बहुत राहत मिलती है। परंतु महेश असुर की लाश की शिनाख्त नहीं हो पाई। इससे पहले भी कई बार महेश असुर को मार गिराने के दावे किये गये थे। परंतु कभी भी पूरी पहचान नहीं हो पायी। उपन्यासकार राकेश कुमार सिंह ने बड़े ही नाटकीय ढंग से उसके मारे जाने और प्रकट होने की घटना को कथारस में लिपटा कर प्रतीकात्मक बनाते हुए यह संदेश देने का प्रयास किया है कि जब तक इन असुरों यानि आदिवासियों पर अत्याचार, शोषण, दमन अतिक्रमण जारी रहेगा।

महिषासुर जैसे जांबाज युवा पैदा होते रहेंगे। इस उपन्यास के माध्यम से राकेश कुमार सिंह ने जल, जंगल, जमीन की बात भी उठायी और यह जाहिर किया है जब तक प्राकृतिक संसाधनों की लूट जारी रहेगी तब तक इस धरती के रक्षक मानवता एवं पृथ्वी को बचाने के लिए आजीवन संघर्ष करते रहेंगे।

फादर पीटर पॉल एक्का के उपन्यास 'पलास के फूल', 'सोन पहाड़ी', 'मौन घाटी', 'जंगल के गीत' आदि उपन्यास जो कि आंचलिक पृष्ठभूमि पर लिखें हैं और कलेवर में अत्यंत छोटे पर उल्लेखनीय हैं। वाल्टर भेंगरा का भी उपन्यास लेखन में योगदान है। शेखर मल्लिक के दो उपन्यास 'कालचित्ती' और 'आधी रात का किस्सागो भी उल्लेखनीय हैं। शिरोमणि महतो का उपन्यास 'करमजला' 2018 में प्रकाशित है। वर्ष 2021 में श्याम बिहारी श्यामल जी का उपन्यास 'कंथा' प्रकाशित हुआ और देशभर में चर्चित रहा। 'कंथा' छायावाद के मूर्धन्य कवि जयशंकर प्रसाद के जीवन पर आधारित है। वर्ष 2022 में विधाभूषण जी का आत्मकथात्मक उपन्यास 'न कोई मील, ना कोई पत्थर' प्रकाशित हुआ।

निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि झारखण्ड के उपन्यास लेखन में झारखण्ड का समाज एवं संस्कृति मार्मिकता के साथ चित्रित हैं साथ ही साथ देशीय एवं वैश्विक समस्याएँ भी इसमें चित्रित हैं।

संदर्भ

1. प्रिया अनामिका, हिन्दी कथा–साहित्य और झारखण्ड, क्राउन पब्लिकेशन रांची, पृ.सं.–12
2. अहमद एम. फिरोज, (सं) वाड.मय (त्रैमासिक) अप्रैल–सितंबर 2022, पृ.सं.–45
3. सिंह राकेश कुमार, ऑपरेशन महिषासुर, भारतीय ज्ञानपीठ, संस्करण–2019, पृ.–20